B.A.III, Paper V
M.A. JOHN
SOCIOLOGY

स्वामी विवेकानन्द

विवेकानन्द का जन्म 12 जनवरी 1863 ई० में कलकत्ता में हुआ। उस समय भारत में प्राचीन शास्त्रीय संस्कृति तथा धार्मिक मूल्यों के विरुद्ध सुधारवादी आन्दोलन चल रहा था जैसे Brahmo समाज की स्थापना तथा थियोसोफिकल सोसाइटी का उदय। Dayanand के विचारों पर इन बातों का भी बहुत अधिक प्रभाव था और उन्हों ने भारत की प्राचीन धार्मिक मान्यताओं को एक नया अर्थ देनें का प्रयास प्रारम्भ कर दिया यही नहीं बल्कि भारतीय संस्कृति की समाप्ती हुई प्रतिष्ठा को पुनः स्थापित करनें एवं नई पीढ़ी को एक नई दिशा देनें का प्रयास किया। उन्होंनें अपनें समाजिक और धार्मिक चिन्तन से सम्पूर्ण विश्व में भारत की प्रतिष्ठा बढ़ाई। दयानन्द नें भारतीय समाज के माध्यम से सम्पूर्ण मानव जाति को समाज में फैली बुराइयों के विरुद्ध खड़ा होनें का पैगाम दिया है।

धर्म, राष्ट्रवाद तथा समाज से सम्बन्धित उन्होंनें जो विचार प्रस्तुत किये हैं उसे विशेष महत्व प्राप्त है। मुख्य! उन्हें एक समाज सुधारक नहीं कहा जा सकता है लेकिन एक सन्यासी के रूप में भी उन्होंनें समय समय पर भारत की अनेक सामाजिक व्यवस्थाओं के बारे में अपनें विचार व्यक्त किये थे उनकी विचार धारा पर रही थी। उन्होंनें भी हिन्दू समाज को विभाजित उन प्रक्रियों पर भी प्रकाश डाला जिनके द्वारा यहाँ की समाजिक संरचना को अधिक व्यवस्थित

बनाया जा सकता था। उनके सामाजिक चिन्तन की चर्चा इस प्रकार की जा सकती है।

(1) रूढ़िवादिता का विरोध: विवेकानन्द ने जिस धर्म को स्वीकार करने की प्रेरणा दी उसमें व्यवहार उन कर्मकाण्डों की उपज है जो हिन्दू धर्म का अंग बन गये हैं। वह पुरोहितों के विरोधी थे और यह विचार था कि पुरोहित वर्ग ने अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिये ही कर्मकाण्डों को बढ़ावा दिया है लेकिन उन्होंने कबीर, चैतन्य, दादू, रामानुज और नानक द्वारा किये गये आदर्शों को महान बतलाया है इसलिये की इन लोगों ने मानव मात्र की समानता पर बल देते हुए विभिन्न प्रकार के भेद भावों को दूर करने का प्रयास किया।

(2) जाति पर आधारित असमानता का विरोध — स्वामी विवेकानन्द ने कुछ विशेष दृष्टिकोण से इसे उपयोगी जरूर माना है लेकिन इसमें परिवर्तन पर बल दिया है उन्होंने कहा कि इस दिशा में निम्न जातियों में सुधार ला कर ही जाति व्यवस्था के दुष्प्रभावों को दूर किया जा सकता है। यदि निम्न जातियाँ उन्हीं सांस्कृतिक व्यवहारों को ग्रहण कर लें जो उच्च जातियों में पाये जाते हैं तब सामाजिक समानता और सामाजिक विकास की प्रक्रिया स्वयं ही प्रभावी बन जायेगी।

(3) दलितों की सामाजिक स्थिति में सुधार: स्वामी जी अस्पृश्यता के विरोधी थे और इस विचार के समर्थक कि कोई भी धर्म जन्म के आधार पर मानव और मानव के अन्तर को स्वीकार नहीं कर सकता। उनके अनुसार एक ही

Scanned with CamScanner

भी ईश्वर सभी मनुष्यों के निर्माता हैं। इसलिए भेद भाव उचित नहीं। इस प्रकार छुआछूत और मनुष्यों के बीच भेद भाव के वे कट्टर विरोधी थे और सभी मनुष्यों को एक ही ईश्वर की सन्तान मानते थे। किसी को अपने आप को आध्यात्मिक व समाज का ठेकेदार मानने का कोई अधिकार नहीं है।

(4) नारी उत्थान: वह स्त्री पुरुष को समान मानते थे उनके अनुसार जो समाज स्त्री को समुचित सम्मान नहीं दे सकता है वह न तो आध्यात्मिकता में और न ही अपना विकास कर पाता है। वह स्त्रियों की चारित्रिक और धार्मिक शिक्षा देकर उनके विकास के पक्षधर थे। इससे पहले भी ब्रह्म समाज द्वारा नारी की स्थिति के सुधार के प्रयास किये गये थे लेकिन स्वामी जी ने वेदान्त धर्म के आधार पर यह प्रमाणित किया कि स्त्रियों को समानता के अधिकार को निषेध करना एक धर्म विरोधी कार्य है।

(5) सामाजिक परिवर्तन: उन्होंने एक ऐसे सामाजिक परिवर्तन की आवश्यकता पर बल दिया जो क्रमिक हो सामाजिक नियमों तथा प्रथाओं के बारे में वह अपने विचार स्पष्ट करते हुए उन्होंने बतलाया कि समाज में प्रत्येक प्रथा के अपने कुछ न कुछ कारण होते हैं। इसके बाद भी उन दोषपूर्ण प्रथाओं कुरीतियों में सुधार करना आवश्यक है जो समाज को विघटित करती हैं। यह सुधार किसी एक दिन में क्रांति द्वारा सम्भव नहीं बल्कि संगठित प्रयासों से इनमें धीरे धीरे ही सुधार लाया जा सकता है।

Scanned with CamScanner